Anveshan (अन्वेषण): A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 2, Issue 1 – 2018

कालिदास का मानवाधिकार चिन्तन

पुष्पेन्द्र कुमार सेवक*

कालिदास मूलतः आनन्द एवं ऐश्वर्य के रससिद्ध कवि है। यद्यपि कालिदास को प्रधानतः शैव मतावलम्बी ही माना गया है। तथापि भारतीय दर्शन तथा धर्म की अन्यान्य मान्यताओं के प्रति उनकी आस्था स्पष्ट भाव से दिखाई पड़ती है, जो उन जैसे राष्ट्रीय–चेता महाकवि के लिए पूर्णतः स्वाभाविक हैं। कालिदास के विचार एवं आदर्श तत्कालीन मान्यताओं के मेल में पड़ते है और उनके चित्रण द्वारा उन्होंने लोक–जीवन को संघटित तथा परिपुष्ट करने का उद्योग किया है। वस्तुतः कभी भी वहाँ भी जहाँ उनकी काव्य विपंची **"सद्यः परनिर्वृत्तये"**[1] की ध्वनियाँ निर्बाध गति से निष्क्रमित करती भासित होती है। लोक संग्रह के तत्त्व उनकी पकड़ से बाहर निकलते नहीं दिखाई पड़ते है। उनकी रचनाओं में जीवन, समाज, शिक्षा, राज्यतंत्र, नारीत्व, पुरुषत्व प्रभृति सभी विषयों से सम्बन्धित आदर्शों की अभिव्यक्ति हुई हैं।

कविवर जयशंकर प्रसाद की उक्ति मानव मूल्यों के लिए सार्थक ही द्रष्टव्य है। "जीवन अनंत अनश्वर और गतिमान है। वह न कभी रूकता है और न कभी नष्ट होता है। अतः उसे जीना आवश्यक है, पर यह जीना इच्छा क्रिया और ज्ञान के समन्वय के साथ होना चाहिये तब ही विषमता समाप्त होगी और अखण्ड आनन्द की प्राप्ति होगी।"

इस उक्ति की सार्थकता को ठहराते हुए हम कह सकते है कि मनुष्य को अपने व्यक्तित्व के विकास तथा गरिमापूर्ण जीवन की परिस्थिति बनाने के लिए अधिकारों की आवश्यकता है। ये अधिकार ही व्यक्ति की प्रगति एवं विकास की दिशा तय करते हैं तथा उसे प्रत्येक क्षेत्र में अपने को प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करते है।

मानव–अधिकार मस्तिष्क की अभिवृत्ति हैं जो मानव और उसकी शक्तियों मामलों लौकिक आकांक्षाओं तथा उसकी भलाई को प्राथमिक महत्त्व प्रदान करता हैं। मानव अधिकार निसर्गदत्त एवं जन्मदत्त अधिकार है। मानव अधिकार के बिना हम जीवन किस प्रकार व्यतीत कर सकते है ? हक की प्राप्ति के साथ जीवन मूल्यों का विकास होता हैं। कालिदास धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष में विश्वास करते है–

"धर्मार्थकाममोक्षाणामवतारे"[2]

मोक्ष के लिए मुक्ति, अपवर्ग, अनपायिपद, अनावृत्तिमयपद इत्यादि शब्दों को उन्होंने प्रयोग किया है। मनुष्य को कर्म का फल भोगना पड़ता है और ज्ञान से ही कर्म दग्ध होते है। कालिदास ने राजा के तीन कार्य बताये हैं–राष्ट्रीय शिक्षा, राष्ट्रीय सुरक्षा तथा राष्ट्र का आर्थिक समुन्नयन। कालिदास ने इसका संकेत रघुवंश महाकाव्य में दिया है यथा–

"प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि"[3]

'क्षतात्किल त्रायते' कहकर उन्होंने राजा के प्रधान धर्म, क्षति से प्रजा की रक्षा करना, को महत्त्व दिया है लेकिन आर्थिक उन्नति को भी वे कम महत्त्व का नहीं मानते।

*प्राचार्य, श्री शिवनारायण चौबीसा महाविद्यालय–सीमलवाडा, जिला डूंगरपुर (राज.)
Correspondence E-mail Id: editor@eurekajournals.com

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. **ISSN: 2581-4044**

वादी प्रतिवादी के विवादों का धर्मज्ञों को कही सहायता से निपटारा करना वे उचित मानते हैं। वह 'एकांकी' निर्णय को दोष मानते है–

''सर्वज्ञस्थाप्येकाकिनो निर्णयाभ्युपगमो दोषाय''[4]

इसलिए वे धर्मज्ञो का न्यायिक सहयोग आवश्यक समझते है। **मालविकाग्निमित्रम्'** के पंचम अंक में 'मन्त्र परिषद' का उल्लेख आया है जहाँ राजा वैदेशिक नीति से सम्बन्धित अपने निर्णय पर उसका अनुमोदन चाहता है। अभिज्ञानशाकुन्तल में कवि ने प्रकृति के प्रति मानवीय दृष्टिकोण को दर्शाया है। शाकुन्तल के प्रथम अंक में शकुन्तला ने वृक्षों को सहोदर कहकर पुकारा है। **''ममापि एतेषु सहोदर स्नेहः''**[5] शकुन्तला के द्वारा वृक्ष सींचन रूपी किया जाने वाला कार्य राजा दुष्यन्त की दृष्टि से अनुचित है एवं उसकी अवस्था अनुसार यह कार्य उससे करवाना बालश्रमिक जैसा है। यथा–

इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः
स्तपः क्षमं साधयितुं य इच्छति।
ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया
समिल्लतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति।''[6]

अनसूया शकुन्तला से कहती है कि सखि शकुन्तले तुम इन दयालु महानुभाव अथवा राजर्षि के द्वारा मुक्त कर दी गई हो। तब शकुन्तला मन ही मन अपनी स्वतन्त्रता के विषय में कहती है कि–

''नतं जनं पर्यहरिष्यम्, यद्यात्मनः प्रानविष्यम्।''[7]

यद्यपि संस्कृत रूपक संवादात्मक एवं अभिनय–प्रधान होते हैं। गद्यकाव्यों, महाकाव्यों, आदि वर्णनात्मक साहित्य की तरह इनमें किसी पर्यावरण तत्त्व के स्वरूप व गुणों के विस्तृत वर्णन का पर्याप्त अवसर नहीं मिलता, तथापि संस्कृत नाटककारों ने परस्पर (पात्रों के संवादों में) पर्यावरण के संरक्षण एवं तत्त्वों के स्वरूप के विषय में अल्पमात्र संकेतों से ही अनेक प्रकार की रोचक व तथ्यात्मक जानकारी प्रस्तुत की हैं। जिसमे नदी, पर्वत, वनस्पत्ति, जीव–जन्तु आदि पर्यावरणीय तत्त्वों में नैसर्गिक सौन्दर्य के दर्शन किए तथा उसे अपनी रचनाओं का विषय बनाकर काव्यात्मक सौन्दर्य में वृद्धि की भौतिक पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से पंचतत्त्वों के प्रति उनमें दिव्य भावना थी। कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक के प्रारम्भ में नान्दी में **'या सृष्टि, स्रष्टुराद्या''**[8] कहकर जल मूर्ति का जो सर्वप्रथम उल्लेख किया है। यह जल के महत्त्व व उसकी उत्पत्ति की दृष्टि से पूर्णतया वैज्ञानिक व साभिप्राय है। वैज्ञानिक एवं साहित्यिक दृष्टि से भी जैविक पर्यावरण का सर्वप्रथम अस्तित्व जल में ही सम्भव हुआ। हमारा संस्कृत साहित्य भी जल को आदिसृष्टि मानता है।

अप एव ससर्जादो तासुवीर्यमवासृजत।''[9]

''आपो वा इदमग्नेसलिल मासीत्।''[10]

अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक में स्नेह, सद्भावना, एवं आत्मीयता की तलस्पर्शी अभिव्यक्ति है। इसी में पशु–प्रेम को दर्शाया गया है–

''न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयस्मिन्''
मृदुनि मृगशरीरे पुष्पराशाविवाग्निः।
क्वबत हरिणकानां जीवितं चातिलोलं,
क्व च निशितनिपाता वज्रसाराः शरास्ते।''[11]

महर्षि कण्व ने अपनी पुत्री शकुन्तला के प्रति अत्यधिक स्नेह प्रकट कर कन्या का मान बढ़ाया है। वर्तमान मे कन्या–भ्रूण हत्या एक अभिशाप बनकर समाज में व्याप्त है। इस प्रकार के अनुचित कर्म पर महाकवि कालिदास द्वारा सामाजिक प्रहार हैं–

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

''यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्ट मुत्कण्ठया''[12]

शकुन्तला का प्रकृति के प्रति अगाधा प्रेम था वह आभूषण प्रेमी होने के कारण कभी पत्तों को तोड़ती नहीं थी। वृक्षों को जल पिलाकर स्वयं जल पीती थी। नये पत्तों के लगने पर उत्सव मनाती थी–

''पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या

नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।

आद्यै वः कुसुनप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः,

सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनु ज्ञायताम्।।[13]

कन्या अपने पिता के घर पर धरोहर के रूप में होती है। कवि कालिदास ने कन्या की तुलना अर्थ (धन) से की है–

''अर्थोहि कन्या परकीय एव''[14]

स्त्री सम्मान की पात्र है। राजा दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला को अस्वीकार करने पर वह अपने भाग्य को कोसती हुई। हाथ उठाकर रोती है तभी अप्सरा तीर्थ पर स्त्री के समान आकार वाली तेजोमयी मूर्ति (शकुन्तला) को गोद में उठाकर गायब हो गई।–

''स्त्रीसंस्थानं चाप्सरस्तीर्थमारा''

दुत्क्षिप्यैनां ज्योतिरेकं जगाम[15]

सामाजिक जीवन की उन्नति के लिए कालिदास 'वर्णाश्रम' धर्म के समर्थक थे। वर्णो एव आश्रमो की व्यवस्था भारतीय सस्कृति में समाज के जीवन को सुचारूरूपेण संचालित करने के निमित्त ही की गई थी। उसमें कर्त्तव्यो के सम्पादन को महत्त्व दिया गया था। ब्राह्मण त्याग–तपस्या का जीवन व्यतीत करते थे और इहलोक एवं परलोक के सत्यो की शिक्षा समाज को देते थे। क्षत्रियों को दानशील, दुष्टदलन तथा पीड़ितों की रक्षा करने वाला बताया गया है–

'क्षत्रात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषुरुढः।

राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरूपक्रोशमली मसैर्वा।।[16]

शाकुन्तला में वैश्यों को ''समुद्र व्यवहारी'' कहा गया है। जो राष्ट्र की सम्पत्ति बढ़ाने के लिए समुद्रों पर भ्रमण कर अन्य देशों से वाणिज्य व्यवसाय किया करते थे। शूद्रों को भी अपने ढंग से राष्ट्रसेवा करते दिखाया गया है और वे अपनी परम्परागत वृत्ति एवं विद्या पर गर्व करते चित्रित हुए हैं। शाकुन्तल में धीवर ने कहा है कि सहज ही विनिन्द्य कर्म भी यदि वंशानुगत है, त्याज्य नहीं है–

''सहजं किल यद्विनिन्दितं न खलु तत्कर्म विवर्जनीयम्।''[17]

वस्तुतः कालिदास ने सभी वर्णों के पूर्णमेल एवं सद्भाव के साथ परस्पर कर्त्तव्य सम्पादन तथा राष्ट्र समृद्धि में सहायक होने पर बल दिया है। शिक्षा के अधिकार के सम्बन्ध में कालिदास के अपने विचार हैं। 'शिक्षक वही सर्वश्रेष्ठ है जिसमें विद्या तथा शिक्षण की योग्यता दोनों ही है।''[18] सच्ची शिक्षा की कसौटी यह है कि जैसे अग्नि में डालने से सोना काला नहीं पड़ता, वैसे ही यह परीक्षा काल में मन्द नहीं होती–

'उपदेशं विदुः शुद्धं सन्तस्तमुपदेशिनः।

श्यामाय ते न युष्मासु यः कांचनमि वाग्निषु।।''[19]

कालिदास नारियों की शिक्षा के समर्थक है। उनकी सभी नायिकाएँ शिक्षित तथा परिष्कृत चित्तवाली है। आश्रम में पली हुई शकुन्तला भी शिक्षित है तथा उसमें व्यक्तित्व एव चरित्र के सभी गुण वर्तमान है। मदनलेख लिखकर, उसने अपनी कला–कविता–विषयक पटुता

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

का प्रमाण दिया है, और दुष्यन्त के तिरस्कार पर उसने जो उसे डाट फटकार लगाई है, उससे उसके चरित्र की दृढ़ता की विज्ञप्ति होती है। कवि का नारियों के प्रति दूसरा पक्ष यह कहता है कि स्त्री के ऊपर पुरुष का सर्वाधिकार है। शार्ंगरव की दुष्यन्त के प्रति उक्ति–

"तदेषा भवतः पत्नी त्यजं वैनां गृहाण वा।
उपयुन्तु हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी।।"[20]

पतिव्रता होने के साथ ही, स्त्रियो को सासुओं के प्रति श्रद्धालु होना चाहिए और सासुओं को भी ऐसी पुत्रवधुओं के प्रति प्यार एवं सम्मान का दान देना चाहिए। शकुन्तला को कण्व ने विदाई के अवसर पर जो उपदेश दिया है। उसमें भारतीय लोकदर्श की सटीक अभिव्यक्ति हुई है। कण्व कहते है–

"शुश्रूषरव गुरून् कुरु प्रियराखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतयामास्मप्रतीपंगमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो यामाः कुलस्याधयः।।"[21]

कालिदास ने 'गृहिणी' शब्द का बार–बार प्रयोग किया है और उसे सौभाग्यवती तथा सुलक्षण स्त्री जाती की प्रतीक चित्रित किया है। इस प्रकार कवि ने स्त्री को आदर्श नारी बताकर स्त्री के सम्मान को प्रकट किया है। मालविकाग्निमित्रम में पारिव्राजिका ने रानी धारिणी से कहा है कि स्पत्नियाँ पतियों पर सम्पूर्ण अधिकार रखती है और उचित कारणों से उन पर कोप भी कर सकती है–

"प्रभवन्त्योऽपि भर्तुषु कारणकोपाः कुटुम्बिन्यः"[22]

कालिदास ने स्त्री–पुरुष समानता को उचित ठहराते हुए कहा है कि नारी को 'श्रद्धा' पुरुष की 'क्रिया' से संयुक्त होकर जब पुत्ररूपी 'धन' की सृष्टि करती हैं, तभी स्त्री–पुरुष दोनों का जीवन धन्य होता है। कालिदास का लौकिक जीवन के लिए गृहस्थों को यही उपदेश हैं। शाकुन्तल में महर्षि मारीच का कथन–

"दिष्टया शकुन्तला साध्वी सदपत्यमिदं भवान्।
श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं तत्समागतम्।।"[23]

जहाँ महर्षि कण्व ने शकुन्तला को सपत्नीजनों के साथ सखी वृत्ति व्यवहार हेतु सन्देश दिया है वही विक्रमोर्वशीय में भी उर्वशी के हृदय में अपनी सोत्निया डाह स्वपत्नो के प्रति ईर्ष्या नहीं थी। कालिदास स्वतन्त्र अभिव्यक्ति एवं पत्र–व्यवहार को उचित मानते थे। विक्रमोर्वशीयम् में उर्वशी भोज पत्र पर आत्मनिवेदन लिख कर राजा के पास फेंक कर चली जाती है।

'तत् प्रभाव निर्मितेन भूर्जपत्रेण लेखं सम्पाद्यान्तरा क्षेप्तुमिच्छामि।"[24]

शकुन्तला भी राजा दुष्यन्त के वियोग में नलिनी के पत्र पर अपने नाखुनों से प्रणय–पत्र लिखकर अपनी मनोदशा का वर्णन कर रही है।

तव न जाने हृदयं मम पुनः कामो दिवापि रात्रावपि
निघृण तपति बलीयस्त्वयि वृत्तमनोरथान्यङ्गानि।।"[25]

वस्तुतः कालिदास के तीनों नाटकों मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम् एवं अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे समाज के लिए आदर्श थे धर्म एव कर्तव्य की परम पराकाष्ठा सम्पन्न है। वे मानव को मिलने वाले स्वतन्त्रता समानता, विचार अभिव्यक्ति, वर्ण समानता, व्यापार की स्वतन्त्रता इत्यादि कई अधिकारों के पक्षधर थे। कालिदास चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

में विश्वास करते थे। कर्मवाद में उनकी आस्था थी–

"फलानुमेयाः प्रारम्भा संस्काराः प्राक्तना इव"[26]

जीवन में कवि आत्मसंयम तथा आत्मबुद्धि पर बल देते थे। वे शान्तिवादी थे। शाकुन्तल में तपस्वियों की महिमा का जो कथन किया गया है। वह सराहनीय है–

'शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढं हि दाहात्मक मस्ति तेजः।

स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्तास्तदन्यतेजोऽ भिभवाद्वमन्ति।।'[27]

कालिदास संस्कृत के और भारतीय संस्कृति के महान् एवं अमर कवि है। उनका यशः शरीर आज भी अमर ही है–

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।

नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्।।

।। इत्यल्लम्पल्लांवेतेन्द्रांतोदेक।।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

[1]. काव्यप्रकाश–1/2.
[2]. रघुवंश महाकाव्य–1/84 डॉ. जगन्नारायण पाण्डेय।
[3]. रघुवंश गहाकाव्य–1/24 डॉ. जगन्नारायण पाण्डेय।
[4]. मालविकाग्निमित्रम्–1/1 डॉ. रमाशंकर पाण्डेय।
[5]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–1/17 का (गद्य) डॉ. सुधाकर मालवीया।
[6]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–1/18 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[7]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–1/32 का (गद्य) डॉ. सुधाकर मालवीया।
[8]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–1/1 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[9]. मनुस्मृति–1.8 पण्डित रामेश्वर भट्ट।
[10]. शतपथ ब्राह्मण–11.1, 6.1.
[11]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–1/8 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[12]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–4/6 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[13]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–4/9 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[14]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–4/22 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[15]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–5/30 डॉ सुधाकर मालवीया।
[16]. रघुवंश महाकाव्य–2/53 डॉ. जगन्नारायण पाण्डेय।
[17]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–6/1 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[18]. मालविकाग्निमित्रम्–1/16 डॉ. रमाशंकर पाण्डेय।
[19]. मालविकाग्निमित्रम्–2/9 डॉ. रमशंकर पाण्डेय।
[20]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–5/29 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[21]. अभिज्ञानशाकुन्तलम–4/18 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[22]. मालविकाग्नि मित्रम्–1/18 डॉ. रमाशकर पाण्डेय।
[23]. अभिज्ञानशाकुन्तल–7/29 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[24]. विक्रमोर्वशीयम्–2/11 का (गद्य) आचार्य चुन्नीलाल शुक्ल।
[25]. अभिज्ञानशाकुन्तल–3/13 डॉ. सुधाकर मालवीया।
[26]. रघुवंश महाकाव्य–1/20 डॉ. जगन्नारायण पाण्डेय।
[27]. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–2/7 डॉ. सुधाकर मालवीया।

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044